सामाजिक विज्ञान

कक्षा- X

मृदा संसाधन

विवरणिका :-

1. मृदा का अर्थ
2. मृदाओं का वर्गीकरण
3. मृदा अपरदन
4. मृदा निम्नीकरण
5. मृदा अपरदन के कारक
6. मृदा संरक्षण व प्रयुक्त विधियाँ

श्रीमती दीपा जोशी
स० अ० - एल० टी० (सामान्य)
रा० क० इ० का० थल (बेरीनाग)
पिथौरागढ़

मृदा (Soil)

प्रकृति द्वारा प्रदत्त सर्वोतम उपहारों में मृदा मनुष्य-जीवन के लिए अमूल्य है। आज भी कृषि मनुष्य का सबसे महत्वपूर्ण व्यवसाय है और मृदा कृषि कार्य को निर्धारित करती है। प्राचीन समय से ही मानव उन क्षेत्रों में निवास करता था जहाँ की मृदा उपजाऊ होती थी। वर्तमान समय में भी यही स्थिति बनी हुई है। गंगा, सिन्धु, नील जैसी नदी घाटियों में उपजाऊपन के कारण ही जनसंख्या की बसावट अधिक है। मृदा सबसे महत्वपूर्ण नवीकरण योग्य प्राकृतिक संसाधन है।

मृदा जमीन पर एक पतली परत के रूप में पाई जाती है। इसका निर्माण चट्टानों के टूटने, पेड़ पौधों व जीव जन्तुओं के सड़े-गले अंश (ह्यूमस), जल तथा गैस के मिश्रण से होता है। मृदा के रन्ध्रों (छेदों) में वायु भी होती है जिसमें कार्बन-डाइ ऑक्साइड अधिक मात्रा में होती है। इसके अतिरिक्त ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन भी पाई जाती हैं।

मृदा के निर्माण में निम्न प्राकृतिक तत्व महत्वपूर्ण योगदान देते हैं —

(1) तापमान में परिवर्तन
(2) बहते जल की क्रिया
(3) पवन
(4) हिमनद (ग्लेशियर)
(5) अपघटन क्रियाऐं

मृदा में 38 से 47 प्रतिशत भाग खनिजों का होता है जो मृदा को उर्वरक शक्ति प्रदान करते हैं। मृदा में पोटाश, कैल्सियम, फास्फोरस, नाइट्रोजन तथा फेल्सपार जैसे खनिज पाये जाते हैं।

मृदाओं का वर्गीकरण —

भारत में अनेक प्रकार की भू-आकृतियाँ, जलवायु और वनस्पतियाँ पाई जाती हैं इस कारण भारत में अनेक प्रकार की मृदाऐं विकसित हुई हैं। भारत में पाई जाने वाली प्रमुख मृदाऐं निम्न प्रकार हैं -

(1) जलोढ़ मृदा — यह मिट्टी (मृदा) नदियों द्वारा बहाकर लाए गए पदार्थों के जमाव से बनी होती है। यह मृदा सिन्धु, गंगा व ब्रह्मपुत्र नदियों द्वारा लाए गए जमाव से बनी है। इस मिट्टी का विस्तार भारत में सर्वाधिक (22% क्षेत्र में) है। यह मिट्टी सबसे अधिक उपजाऊ मिट्टी है तथा यह उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, बिहार, पश्चिम बंगाल, असम, गुजरात व राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में पाई जाती है। महानदी, कृष्णा, कावेरी और गोदावरी नदियों के डेल्टा भी जलोढ़ मृदा से बने हैं।

यह मिट्टी गन्ना, गेहूँ, चावल और दलहनी फसलों के लिए उपयुक्त है।

जलोढ़ मृदाऐं दो प्रकार की होती हैं-

(अ) खादर — इस मृदा में कंकड व बड़े पत्थरों की माला ज्यादा होती है तथा बाढ़ का पानी यहाँ तक नहीं पहुँचता है।

(ब) खादर — इस मृदा में अधिक महीन कण होते हैं तथा यह मृदा बाढ़ के पानी द्वारा फैलायी जाती है।

जलोढ़ मृदा में पोटाश, फास्फोरस और चूने की मात्रा पाई जाती है जिस कारण यह फसलों के लिए उपजाऊ होती है। इसी कारण जलोढ़ मृदा क्षेत्रों में जनसंख्या की बसावट ज्यादा होती है।

(2) काली मृदा —

यह मृदा लावा के जमावों से बनी है। इस मृदा का रंग काला होता है। इसे 'रेगर मृदा' भी कहते हैं और रूस में इसे 'चरनोजम' कहा जाता है। यह मृदा कपास की खेती के लिए अच्छी मानी जाती है। इस मृदा में कैल्शियम मैगनीशियम, पोटाश और चूने जैसे पौष्टिक खनिज होते हैं। गर्मी या शुष्क ऋतु में इनमें गहरी दरारें पड़ जाती हैं। यह पानी को अच्छी तरह से धारण करती है और पानी पड़ने पर चिपचिपी हो जाती है। यह मृदा महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्र प्रदेश व पश्चिमी मध्य प्रदेश में पाई जाती है। कपास के अलावा यह मृदा अलसी, मूंगफली और चने के लिए भी अच्छी होती है।

(3) लाल और पीली मृदा — लाल मृदा प्राचीन लाल पत्थर की चट्टानों के टूट-फूट के जमावों से बनी है। लाल और पीली मृदा तमिलनाडु, छोटा नागपुर, कर्नाटक, मध्य-प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान व दक्षिणी-पूर्वी महाराष्ट्र तथा आन्ध्र प्रदेश के पूर्व में पाई जाती है। इनका रंग लाल लौह तत्व की मात्रा अधिक होने के कारण व पीला रंग जलयोजन के कारण होता है। यह मृदा कृषि कार्य के लिए उपयुक्त नहीं होती है लेकिन अच्छी जलवायु होने पर केला, मूंगफली, रबड़ और गरम मसाले पैदा किये जा सकते हैं।

(4) लेटराइट मृदा —

लेटराइट मृदा उच्च तापमान और अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में पाई जाती है। भारी वर्षा के कारण इस मृदा में निक्षालन (Leaching) क्रिया होने से चूना

व सिलिका निक्षालित हो जाते हैं और इसमें ह्यूमस की माता कम हो जाती है। ये मृदा मुख्यतया कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, उड़ीसा तथा असम के पहाड़ी क्षेत्रों में पाई जाती हैं। यह चाय उत्पादन के लिए उत्तम मृदा है। लाल लेटराइट मृदा काजू की फसल के लिए उपयुक्त होती है तथा मकान बनाने के लिए इस मृदा से ईटें बनायी जाती हैं।

(5) मरुस्थली मृदा — ये मृदाऐं पश्चिमी राजस्थान के मरुस्थलीय भागों में मिलती हैं। इन मृदाओं में नमक की माता अधिक होती है जबकि ह्यूमस की कमी होती है। शुष्क जलवायु और उच्च तापमान के कारण इस मृदा में पानी का वाष्पन अधिक होता है। अच्छी सिंचाई के द्वारा इसको कृषि योग्य बनाया जा सकता है। यह मृदा बलुई और हल्के रंग की होती है।

(6) वन मृदा —

यह मृदा पहाड़ी क्षेत्रों में पाई जाती है जहाँ पर्याप्त वर्षा वन पाये जाते हैं। पहाड़ी के ऊपरी ढालों में यह मृदा मोटे कण वाली होती है जबकि घाटियों में यह मृदा महीन कण और उपजाऊ होती है। यह मृदा चाय, कॉफी, मसाले की खेती के लिए उपयुक्त होती है।

मृदा अपरदन

मिट्टी (मृदा) के कटाव या बहाव को मृदा अपरदन कहते हैं। पानी और हवा तथा जीव-जन्तुओं या मनुष्य के कारण मृदा की ऊपरी सतह हट जाती है। मृदा के बनने और उसके कटाव या बहाव ये दोनों क्रियाऐं साथ-साथ चलती हैं इससे दोनों में सन्तुलन बनता है। लेकिन कई बार प्राकृतिक या मानवीय हस्तक्षेप से यह सन्तुलन बिगड़ जाता है जो मृदा अपरदन का मुख्य कारण है इससे मृदा निम्नीकरण की समस्या उत्पन्न हो जाती है। मृदा अपरदन के मुख्य दो रूप निम्न हैं-

(1) परत अपरदन — जब मृदा की बारीक परतें तेज हवा या भारी वर्षा द्वारा उड़ाकर या बहाकर ले जायी जाती हैं इसे परत अपरदन कहते हैं इससे मृदा का उपजाऊपन कम होता जाता है।

(2) अवनालिका अपरदन — जब मृदा की लम्बवत परतें तेज हवा या भारी वर्षा द्वारा बहाकर ले जायी जाती हैं इसे अवनालिका अपरदन कहते हैं। इस अपरदन में गहरी नालियाँ और खड्ड बन जाते हैं जिससे जमीन ऊबड़-खाबड़ हो जाती है और बेकार हो जाती है। इसी से बीहड़ बनता है।

कृषि के गलत तरीकों से भी मृदा अपरदन होता है। गलत ढग से हल चलाने जैसे ढलान पर ऊपर से नीचे की ओर हल चलाने से नालियाँ बन जाती हैं और जिसके अन्दर बहता हुआ पानी जाने से मृदा का कटाव शुरू हो जाता है।

मृदा अपरदन के कारक —

मृदा अपरदन के मुख्यतया निम्नलित कारक हैं जिसे निम्न प्रकार समझा जा सकता है।

मृदा संरक्षण

मृदा संरक्षण एक विधि है जिसमें मृदा की उर्वरता बढ़ाने के लिए विभिन्न उपाय किये जाते हैं। मृदा के अपरदन को रोका जाता है और मृदा निम्नीकरण की दशाओं में सुधार किया जाता है।

मृदा संरक्षण की विधियाँ — मृदा संरक्षण की प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(1) **वृक्षारोपण व घास रोपण** — मृदा के अपरदन को रोकने के लिए विस्तृत भाग में वृक्षारोपण करना आवश्यक है। घास रोपण द्वारा मृदा को बांधे रखने में सहायता मिलती है जिससे अपरदन रोका जा सकता है।

(2) **नियन्त्रित पशुचारण** — नियन्त्रित पशुचारण के द्वारा वनस्पतियों के अत्यधिक चराई से मुक्ति मिलती है और वनस्पतियों में वृद्धि होती है।

(3) **समोच्च रेखीय जुताई** — ढलान वाले धरातल पर समोच्च रेखाओं के साथ-साथ बाँध बना कर जुताई की जाती है जिससे अधिक ढाल को धीमे ढाल में बदल दिया जाता है।

(4) मेड़बन्दी करना — हल्के ढाल वाले मैदानी भागों में स्थित खेतों की मेड़ों को ऊँचा कर भूमि कटाव को रोका जाता है इससे भूमिगत जलस्तर में भी वृद्धि होती है।

(5) नदियों पर बाँधो का निर्माण — नदियों में आने वाली बाढ़ों को रोकने के लिए नदियों पर स्थान-स्थान पर बड़े बाँधों का निर्माण किया जाता है जिससे नदी के प्रवाह को कम किया जाता है। जहाँ पर बाँध बनाया जाता है वहाँ पर जल विद्युत भी उत्पादित की जाती है।

(6) फसल आवर्तन — इस विधि के अन्तर्गत भूमि पर एक फसल बार-बार न बोकर अन्य फसलों को भी उगाया जाता है विशेषकर फलीदार फसल जैसे- मटर, चना आदि। इससे भूमि की उर्वरकता बढ़ती है क्योंकि फलीदार फसल के पौधों की जड़ों में स्थित बहुत से जीवाणु वायु की नाइट्रोजन को ग्रहण करते हैं उसे नाइट्रोजन यौगिकों में बदल देते हैं।

(7) अन्य विधियाँ — अन्य विधियों के अन्तर्गत वायु अपरदन को रोकने के लिए पेड़ों की रक्षक कतार बनाना, मिट्टी के प्रदूषण को रोकना और पर्याप्त सिंचाई साधनों के द्वारा मृदा संरक्षण किया जाता है।